स्वराज की अवधारणा

एक विचार तथा रणनीति के रूप में, स्वराज ने स्वतंत्रता संग्राम व राष्ट्रवादी विचार के संदर्भ में पर्याप्त महत्व प्राप्त किया साथ ही राजनीतिक प्रक्रिया में बढ़ते जनतांत्रीकरण में भी अभी तक सामाजिक–आर्थिक रूप में हाशिए पर रहे समाज में प्रवेश पा लिया था। अतः स्वराज, इस अर्थ में सामाजिक विषमता दूर करने वाला था कि इसने सामाजिक–आर्थिक तथा सांस्कृतिक भिन्नता से परे लोगों को गतिशील करने में सहायता की। राजनीतिक रणनीति के रूप में यही स्वराज की सफलता थी। भारत जैसे अत्यन्त विभाजित समाज में, स्वराज को निम्नवत परिभाषित किया गया – (अ) राष्ट्रीय स्वतंत्रता; (ब) व्यक्ति की राजनीतिक स्वतंत्रता; (स) व्यक्ति की आर्थिक स्वतंत्रता; तथा (द) व्यक्ति की आध्यात्मिक स्वतंत्रता या स्वशासन। यद्यपि ये चार परिभाषाएं स्वराज की चार भिन्न विशेषताओं से सम्बन्धित हैं, लेकिन वे परस्पर पूरक हैं। इनमें से पहली तीन की प्रकृति नकारात्मक है जबकि चौथी अपने विचार में सकारात्मक है। 'राष्ट्रीय स्वतंत्रता', व्यक्तिगत 'राजनीतिक' तथा 'आर्थिक' स्वतंत्रता के रूप में स्वराज में

विदेशी शासन की समाप्ति तथा लोगों और गरीबी द्वारा किए जा रहे शोषण का अन्त शामिल है। आध्यात्मिक स्वतंत्रता इस अर्थ में सकारात्मक गुण है क्योंकि यह वह स्थिति है जिसे, पहले तीनों शर्तें पूरी होने के पश्चात, सभी प्राप्त करना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में, यह अन्तर्निहित अनुमान है कि स्वशासन, स्पष्ट रूप से परिभाषित नकारात्मक तत्वों, जो स्वराज को अपने नैतिक अर्थ में प्राप्त करने के मार्ग में बाधक है, की अनुपस्थिति में ही सम्भव है। अपने अवधारणीकरण में गाँधी ने अंग्रेजी अनुवाद के स्थान पर स्वराज शब्द का ही प्रयोग शायद इसका समुचित समनार्थी दूसरी भाषा में न मिलने के कारण उचित समझा।[5] स्वराज की व्याख्या करते हुए महात्मा ने इसे स्वदेशी, जिसमें स्वराज का विचार पुष्ट हुआ, के साथ जोड़ा। अन्य शब्दों में, यदि गाँधी के सामाजिक व राजनीतिक विचारों का आधारभूत सिद्धान्त स्वराज था तो स्वदेशी, अब तक अस्तित्व में रहे समाज से भिन्न समाज के लिए उपयुक्त सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक उपायों का व्यावहारिक प्रदर्शन था।

जैसा कि स्पष्ट है स्वराज राजनीतिक मुक्ति मात्र ही नहीं था; व्यापक रूप से इसका अर्थ मानव की मुक्ति भी था। उदारवादी सम्भवतः इस विचार की अवधारणा करने में, यद्यपि अत्यन्त सीमित अर्थ में, अग्रगामी थे, स्वराज की सर्वाधिक रचनात्मक व्याख्या महात्मा गाँधी द्वारा की गई, जिसके अनुसार इसका उद्देश्य विदेशी शासन से राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना मात्र नहीं था। उनके शब्दों में "अंग्रेजों का चले जाना मात्र स्वतंत्रता नहीं है। इसका अर्थ एक सामान्य ग्रामीण की यह चेतना है कि वह अपना स्वयं भाग्यविधाता है, (कि) वह अपने प्रतिनिधि के माध्यम से अपना खुद कानून निर्माता है" (गाँधी, 1975 दः 469)।

स्वराज की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता राजनीतिक स्वतंत्रता है। उदारवादियों के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता का अर्थ ब्रिटिश प्रशासन के नियंत्रण में स्वायत्तता प्राप्त करना था। उदारवादियों में भी सर्वाधिक उग्र सुरेन्द्रनाथ बनर्जी भी ब्रिटिश भारत में भारतीयों के राजनीतिक अधिकारों को संवैधानिक उपायों की सीमा में ही प्राप्त करने के समर्थक थे। उदारवादियों से भिन्न उग्रवादी, पद्धति की अधिक परवाह नहीं करते थे तथा पूर्ण स्वतंत्रता पर जोर देते थे, जिसका तात्पर्य ब्रिटिश सरकार का भारत से सम्पूर्ण रूप से चले जाना था। यद्यपि ये दोनों ही स्थितियाँ गुणात्मक रूप से भिन्न थीं, तथापि स्वराज को इसलिए मान्यता मिली क्योंकि इसने राजनीतिक स्वतंत्रता के संकुचित विचार के स्थान पर व्यापक पक्ष, जिसे गाँधी ने सदैव प्रमुखता दी, पर अधिक जोर दिया। गाँधी के पूर्ववर्ती राष्ट्रवादियों ने राजनीतिक स्वतंत्रता, जो ब्रिटिश शासन के वापस चले जाने पर ही सम्भव थी, पर जोर दिया, गाँधी के लिए विभिन्न प्रकार के अत्याचार, जिन्हें आदिम सामाजिक मूल्यों के नाम पर उचित ठहराया जाता था, से मुक्ति उतनी ही महत्वपूर्ण थी जितनी उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता महत्वपूर्ण थी।

व्यक्ति की आर्थिक स्वतंत्रता स्वराज का तीसरा पक्ष था। उपनिवेशवाद की अन्तर्निहित शोषक प्रकृति के कारण, उपनिवेशी राष्ट्र में गरीबी अवश्यम्भावी थी। गोखले तथा नौरोजी सहित अन्य उदारवादियों के लिए भारत में संवैधानिक स्वायत्तता की आश्वस्ति से गरीबी दूर हो सकती थी क्योंकि ब्रिटेन, जो कि उभरती हुई औद्योगिक शक्ति थी, से अपेक्षा थी कि वह पूंजीवादी आर्थिक संगठनों तथा आधुनिक विज्ञान व प्रौद्योगिकी को आरम्भ करके भारत की उत्पादक शक्ति को विकसित करेगा। शीर्घ ही उनका भ्रम टूट गया क्योंकि भारत का आर्थिक विकास ब्रिटिश शासन से उनकी अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं था। उसके स्थान पर भारत 'विदेशी पूंजी के स्वतंत्र प्रवाह' के बावजूद गरीबी की स्थिति में पड़ा हुआ था। अतः उदारवादी नेताओं ने कहा कि उन्नीसवीं शताब्दी के उपनिवेशवाद ने "भारत को अन्नादि तथा कच्चे माल के महानगरों में आपूर्तिकर्ता, महानगरों के उत्पाद के लिए बाजार तथा ब्रिटिश पूंजी के निवेश के क्षेत्र के रूप में परिवर्तित कर दिया है" (चन्द्र इत्यादि, 1988: 92)।

गाँधी के लिए, भारत का आर्थिक भविष्य चरखा तथा खादी (हाथ के बुने वस्त्र) में निहित है। 'यदि भारत के गांवों को जीवित रहना तथा समृद्ध होना है तो चरखा को सर्वव्यापी होना आवश्यक है।'[6] ग्रामीण सभ्यता, गाँधी ने कहा, 'चरखा तथा उससे सम्बन्धित अन्य चीजों, जैसे ग्रामीण हस्तकला की पुनर्स्थापना के बिना असम्भव है।'[7] इसी प्रकार,

> जब तक ऐसा समय, यदि कभी, आए जब भारत के प्रत्येक गांव के सोलह वर्ष के ऊपर के प्रत्येक सक्षम स्त्री–पुरुष को खेतों, कुटीर उद्योगों यहां तक कि कारखानों में कार्य करने तथा उचित वेतन पाने की बेहतर व्यवस्था हो, तब तक भारत के करोड़ों लोगों के लिए (खादी) ही एक मात्र सच्चा आर्थिक उपाय है, (गाँधी, 1936 ए; 1975 एफः 77-78)।

चूंकि मशीनीकरण "एक बुराई थी उस स्थिति में जब काम के लिए आवश्यकता से अधिक हाथ उपलब्ध हों, जैसा कि भारत में है (उन्होंने अनुशंसा की) तब ग्रामीणों को कार्य की उपलब्धता मशीनीकरण से नहीं अपितु अभी तक प्रयोग में लाए जा रहे उद्योगों के पुनर्जीवित करने में निहित है" (गाँधी 1934 में 1975 जी: 356)। उन्होंने, अतः सुझाव दिया—

> ... लघु उद्योग की पद्धति हमारे देश की योजना के लिए बुद्धिमानी की योजना होगी। हमारे देश के लिए कोई भी योजना जो, श्रमधन की उपेक्षा करती हो उचित नहीं है... उत्पादन की केन्द्रीय पद्धति, जिसमें उत्पादन की कितनी भी क्षमता हो, बहुसंख्यक लोगों, जिन्हें काम चाहिए, के लिए रोजगार प्रदान करने में असमर्थ है। इसलिए इस देश में नकारने योग्य है (गाँधी 1939 में 1975 ईः 74)।

गाँधी को पूरा विश्वास था कि पश्चिम की तरह का औद्योगीकरण भारत के लिए विनाशकारी होगा। उनका विकल्प हर सक्षम व्यक्ति को लाभदायक रोजगार उपलब्ध कराने की चिन्ता से जुड़ा था। उद्योगवाद भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था की नींव को ही कमजोर नहीं करता अपितु, 'जैसे ही प्रतियोगिता व बाजारवाद आएगा, ग्रामीणों का प्रत्यक्ष या परोक्ष शोषण का कारण बनेगा' (गाँधी, 1936 बी; 1975 एफ: 241)[8]। भारत की आर्थिक व्यवस्था के त्वरित सुधार के लिए नेहरू के औद्योगीकरण के प्रति मोह की आलोचना करते हुए उन्होंने अपनी स्थिति को दृढ़ता से यह कहते हुए दोहराया, 'किसी भी प्रकार का समाजीकरण उद्योगवाद में अन्तर्निहित बुराइयों को दूर नहीं कर सकता' (गाँधी, 1940 बी; 1975 : 29-30)। उनका लक्ष्य उद्योगवाद की चमक से भ्रमित विशिष्ट प्रकार की सोच थी जो हर कीमत पर देश में व्यापक स्तर पर औद्योगीकरण के पक्ष में थी। उनका पारम्परिक हस्तशिल्प के प्रति समर्थन रूढ़िवादी कारणों से नहीं था, अपितु इस अर्थ में ठोस आर्थिक आधार पर था कि पश्चिमी सभ्यता की आलोचना करके उन्होंने भारत की यथार्थ स्थितियों के अनुकूल आर्थिक विकास के वैकल्पिक प्रतिमान का विचार प्रस्तुत किया।

चौथा, स्वशासन स्वराज का सम्भवतः विशिष्ट पक्ष है जो राजनीतिक स्वतंत्रता से गुणात्मक भिन्नता प्रकट करता है। एक अवधारणा के रूप में, यह स्वतंत्रता के मार्ग की आंतरिक बाधाओं को दूर करने की प्रक्रिया का सूचक है। पहली तीन विशेषताओं से भिन्न जहां स्वराज को नकारात्मक रूप से अवधारित किया गया है, स्वशासन एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में समाज के लिए प्रासंगिक नैतिक मूल्यों की महत्ता की ओर इंगित करता है। यह कहा जा सकता है कि औपनिवेशिक शासन की समाप्ति से आर्थिक व राजनीतिक स्वतंत्रता स्वतः ही प्राप्त हो जाएगी, लेकिन यही बात स्वराज यानी स्वशासन के लिए नहीं कही जा सकती, सम्भवतः इसीलिए, क्योंकि 'इसे स्वयं प्राप्त करना है' न कि दूसरों द्वारा 'दिया जाना' है।

गाँधी का स्वराज का विचार अद्वैत के दार्शनिक विचार पर आधारित प्रतीत होता है जो "व्युत्पत्ति के रूप में 'स्व' का राज या आदेश या व्यवस्था है, इस सत्य पर आधारित कि तुम और मैं भिन्न नहीं अपितु एक हैं" (रामचन्द्र गाँधी, 1984: 461)। अतः गाँधी का स्वराज के लिए संघर्ष, तथा वास्तव में तिलक तथा अरविन्द जैसे चिन्तकों और क्रान्तिकारियों के नेतृत्व में स्वराज के लिए भारतीय संघर्ष भारतीय दर्शन और अध्यात्म पर आधारित था, तथा "स्पष्ट रूप से सदैव अद्वैतवादी संघर्ष था, विभ्रम, अराजकता, विजातीयता तथा विभाजकता के विपरीत अपने 'स्व' के साम्राज्य अथवा स्वायत्तता तथा पहचान के लिए संघर्ष था" (पूर्वोक्त)। ब्रिटिश शासन या आधुनिक औद्योगिक सभ्यता अस्वीकार्य थी क्योंकि यह अपने न होने के भ्रम या अन्यता की शक्ति का प्रतीक थी, स्पष्टतः यह माया

का प्रतीक थी, जो आत्मानुभूति के सत्य द्वारा ईश्वर से 'साक्षात्कार' के प्रयास में बाधक थी (पूर्वोक्त : 462)।

स्वराज को राजनीति के आत्मनिर्णय तक सीमित न रखकर सर्वाधिक व्यापक आशय के रूप में प्रस्तुत करके गाँधी ने स्वराज को विचारों में भी स्पष्ट किया। व्यक्ति के ऊपर व्यक्ति के राजनीतिक आधिपत्य को राजनीति के क्षेत्र में बहुत स्पष्टता से महसूस किया जा सकता है और इसे आसानी से बदला जा सकता है। राजनीतिक पराधीनता मुख्यतः लोगों के बाह्य जीवन को सीमित करती है लेकिन एक सूक्ष्म प्रभुत्व है जिसका एक संस्कृति द्वारा दूसरी संस्कृति पर विचारों के क्षेत्र में प्रयोग किया जाता है, पर इसका प्रभुत्व परिणाम की दृष्टि से अधिक गम्भीर है क्योंकि यह राजनीतिक सत्ता के हटा दिए जाने के बाद भी प्रासंगिक बना रहता हैं। अतः स्वशासन को शुद्ध रूप में पाने के लिए सांस्कृतिक पराधीनता, जिसके लिए उपनिवेशी भी दोषी हैं, को चुनौती आवश्यक है। गाँधी की स्वराज की आत्मपरिवर्तन के साधन के रूप में परिभाषा सुनियोजित सांस्कृतिक पराधीनता के औपनिवेशिक प्रयास को रोकने की चेष्टा भी है क्योंकि विदेशी शासन की समाप्ति के बाद भी विदेशी आधुनिकता को निर्विवाद रूप में स्वीकार कर लेने के कारण इसके बने रहने की सम्भावना है। सांस्कृतिक पराधीनता समाहित करने से इस अर्थ में भिन्न है कि यह "भिन्न संस्कृतियों में अन्तरसंवाद की अपने परम्परागत विचारों और भावनाओं की अन्धी उपेक्षा किये बिना सृजनात्मक प्रक्रिया है" (भट्टाचार्य, 1984: 385-86)। अतः स्वराज को यदि संकुचित अवधारणा में समझा जाए तो यह राजनीतिक कार्यक्रम तक सीमित रह जाएगा, जिसमें इसके व्यापक पक्ष, जहां सांस्कृतिक पराधीनता की नींव को ही चुनौती दी गई है, की उपेक्षा होगी।

गाँधी यह भी जानते थे कि उचित सामाजिक–राजनीतिक वातावरण के बिना आन्तरिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं की जा सकती। अतः ब्रिटिश शासन को समाप्त करने की आवश्यकता थी जिससे राजनीतिक व आर्थिक स्वतंत्रता भी सुनिश्चित हो सके। दूसरे शब्दों में, चूंकि स्वतंत्रता के लिए उपयुक्त वातावरण की आवश्यकता थी, अतः इसे उचित राजनीतिक व आर्थिक गतिविधियों द्वारा प्राप्त करने व बनाये रखने की आवश्यकता थी। सामाजिक–आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्र में उचित प्रकार से व्यवहार करने की योग्यता 'स्वशासन, जो व्यक्ति को सक्रिय नागरिक का जीवन व्यतीत करने के लिए तैयार करती है, के नए अर्थ की परीक्षा है। अतः गाँधी के विचारों में आध्यात्मिक स्वतंत्रता गैर–सामाजिक, गैर–राजनीतिक तथा तारतम्य विहीन स्थितियों में नहीं प्राप्त हो सकती" (परेल, 2000: 17)। फ्रेड डालमायर (2000: 11) के अनुसार गाँधी की अवधारणा में स्वराज का स्पष्ट अर्थ व्यापक समुदाय के स्वशासन, जो कि राष्ट्रीय प्रजातांत्रिक स्वशासन या गृह शासन की समानार्थी है, से है। राजनीतिक समुदाय